

मैथिली-धूर्त्तसमागम

ज्योतिरीश्वर कविशेषराचार्य

(जोतिक कवि)

मैथिली-धूर्तसमागम

... ...

स्नातकः (सक्रोधं संस्कृतमाश्रित्य)—[श्री १३ क]

नो जानाति कुलीनमुत्तमगुणं सत्त्वान्वितं धार्मिकं
नाचारप्रवणं न कार्यकुशलं न प्रज्ञयालङ्कृतं।
नीचं क्रूरमपेतसत्त्वसहृदयं यस्मादियं सेवते
तत्त्वं सानुगुणः पयोधिसुतया लक्ष्म्या प्रमाणीकृतः ॥

अरे णट्ठपरलोआ दुट्ठवम्भणा ईदिसे दूसहमज्झण्हे पठमं तुमं महाधणं भेक्खिअ कुदो अण-दो गदुअ अम्हेहिं भिक्खा पत्थिदव्वा ।

॥ विभासरागे ॥

न लइ पथिक तरुण व(ओ[1])सु रे । ।
एखने हमर गमन नहि दूरे । ॥ ध्रुवं । ॥
दिवस क × × (?ल्याण) अतिथि (?म)ञे तोरा । ।
चिन्तहि धनिक स (?सं) भोयण(?ल) मोरा । ॥
भगव देखि [१३ख] अलङ्कार बुझावे । ।
कविशेषर जोतिक एहु गावे । ॥

मृताङ्गारः—भगवन् ! अस्मदावासोत्तरे सुरतप्रिया॰ नाम मासोपवासिनीति तत्र गम्यतां॰

(इत्यभिधाय सत्वरं निष्क्रान्तः ।)

विश्वनगरः—वत्स ! यद्येवं तत्समीहितमेव सम्पन्नं । तदेहि तत्रैव गच्छाव ।

(इति परिक्रामतः)

स्नातकः (पुरोऽवलोक्य गन्धमाघ्राय च)—भअवं प्रेक्ष्य एकङ्गिआमुत्थमेत्थिआसंयुत्तमहाहन्द कुट्ठपरिमलुग्गारो अग्गिमभवणादोणं सेवदि । ता एदं ज्जेव सुरअप्पिआए वासभवनं तक्केमि ।

१—ई अक्षर काटल छैक ।

विश्वनगरः—विदग्धैव किल मासोपवासिनी किम्वदन्ती
तदाग[१४क[1]]च्छोपसर्प्पाव

(इत्येकान्ते स्थितौ ॥)

(ततः प्रविशति सुरतप्रिया)

॥ शाल(सार?)ङ्गीरागे ॥ पणितालताले ॥

अइलि हे (रे[2]) मम वासी
परधना बन्धि खाथि निवासी ॥ ध्रुवं ॥
कुश कमण्डलु पूड़ा साँख ।
काकन वाह गरा रुद्राख ।
चाँन्दन वेन्दा लाइ सुललाट ।
पथिक ठकथि वैसलि बाट ॥
आरब आहर धरम मोख ।
मुरख समर्थ सवहि सोख ॥
सुनिअ सुरतप्रिआ रीति ।
हसइ सिरि गणेसर मन्ति ।

१—एहि स्थलसँ नेपालक पुस्तकालयमे जे संस्कृत-धूर्त्तसमागम छैक तकर पृ० ६(क) आरम्भ छैक ।

२—ई अक्षर काटल छैक ।

धम्मो ण इष्ठा(?ट्ठो[1]) बहुदुक्खचेष्ठो(?ट्ठो[1])
मोत्तेण(?मोत्तोनं[1]) सोक्खं मम अत्थि सव्वं(?च्चं)।
अत्थो समत्थो सय[2]लं(?अलं) विधावं(?दुं)
अण[१४ ख]ङ्गसव्वस्सकलाणिहाणं ॥

स्नातकः—(उपसृत्य)। अज्जे एसो भअवं विस्सणअरो तुम्हाणं अदिधी(उ)अत्थिदो।

सुरतप्रिया (परिक्रम्यावलोक्य च)—कथं भअवन्ता उअस्स-प्पामि (उपसृत्य) भअवं(नं[3]) पणमामि।

विश्वनगरः (सप्रमोदं)—अभिलषितभाजनं भूयाः।

सुरतप्रिया—भअवं तुम्हाणं प[4]साएण

विश्वनगरः—एवमचिरादस्तु

सुरतप्रिया—आणवेदु भअवं जं मए कादव्वं दाअव्वश्च

विश्वनगरः—शुभे किमस्माकमदेयं भवत्या। सांप्रतं भिद्ये-(च्चै?)व तावत्

१—ई पाठ संस्कृत धूर्त्तसमागमकेर थिक।

२—एतए एकटा कोनो अक्षर जे पढ़ल नहि मेल, काटल छैक प्रायः ओ "खो" छैक।

३—ई अक्षर काटल छैक।

४—'प' अक्षर काटि क 'व' चढ़ाओल छैक।

सुरतप्रिया—भअवं[1] कीदिसी भिक्ष्का कीदिसीए बेलाए केत्तिआइं ते अणाजि ।

विश्वनगरः(सहर्ष)—श्रूयतां[1]

मांसं[2] माष[3][१५क]पटोलतक्रवटिकावास्तूकशाकं वटः
सञ्जीवन्यथ मुद्गमत्स्यविदलप्रायः प्रकारोत्करः ।
स्वादिष्टं च पयोघृतं दधि नवं रम्भाफलं शर्क्करा
सन्तेपादिति साध्यतां सुवदने भिक्षा मदीया द्रुतं ॥

बरालीरागे । एकतालीताले ।

भिखिआ मोरि करब रे ।
सुवदनि भिखिआ मोरि करब रे आ ॥ ध्रुवं ॥
मासु माछ बल बटिका सांजवि
सद्य(?) सुनि साग परोले आ ।
मुद्ग दितले परकार कर[4]व
सबे सङ्गिनि कहउ थोले आ ।

१—ई शब्द संस्कृते पोथीमे छैक ।
२—नीचाँमे शोधिकें 'मांस्सं' लिखल छैक ।
३—एहिठाम 'माषय' पाठ छलैक ।
४—एकटा 'ह' लिखिकें काटल छैक ।

तहि दिन जनमाओल दधि
सुनु सत्वर सोन्ध दूध बड़ घीवे ।
केरा सङ्गि रस वेद्य(?) युगुताओव
कविशे[१५क]षर जोतिक एहु[१] गावे ॥

सुरतप्रिया ॥ (विहस्य स्वगतं)—एसो महप्पा अप्पविसज्जणजोग्गो ज्जेव देवस्स पसाएण सम्पण्णो । (प्रकाशं अञ्जलिं बध्वा)

एदं श(?स[२])रीरं विरहेण जुत्तं ।
पाणा[२] तहा धम्मफलेक्कसारा ।
सव्वं तुहाअत्तमुदारकित्ति ।
का वाहिरे वत्थुणि अत्थि अत्था ॥

ताव अन्तरघरं पविसिअ वीसमीअदु भअवं । अहं उण भिक्खापआरं करोमि ।

स्नातकः (सोत्साहं[३])—भअवं पेक्खेसि (संस्कृतमाश्रित्य)

१—'हु' पाँतीक उपर चढ़ाओल छैक । पाँतीमे 'हि' लिखल छैक ।
२—ई अक्षरसभ संस्कृत धूर्त्तसमागम मात्रमे छैक ।
३—ई अक्षरसभ संस्कृत पोथीमे नहि छैक ।

पक्वाः कुन्तलराजयः कटकटाक्षामौ कपोलावुभा-
वेतस्याः स्तनमण्डलं निपतितं शुष्का नितम्बस्तटी।
दृक्पातस्मितभाखि(षि?)तैः शिवशिव प्रस्तौति नेत्रोत्सवं
ब्रूमः किं किं [१६क]करवाम वेति[1] किमियं दुष्टा जरत्तापसी॥

॥ लरि(लि?)त रागे ॥ एकतालीताले ॥

चल चल चलम्भा विफ(?क)ल तञी
सित्ता [2]महु बोलसि मसत्रासि राञी ॥ध्रुवं॥
गाल पचकि लवि गेलओक आ।
तइअओ न छाड़सि अपनु कि मया ॰ ॥
भुषलि किञ्चिनि सन तोहर चान ॰
कके विहुसि[3] हसि लेसि परान॥
पडअ पयोधर पाकल बार
सिव-सिव कत करब अनविकार ॰।
कविशेषर जोतिक एहु गाव
राए हरसिंह नरए रस भाव ॥१२॥

१—ई छवओ अत्तर संस्कृत पोथीमे छैक।
२—एहिठाम इकार छलैक जे काटल छैक।
३—प्राय: एकरा 'सी' बनाए शुद्ध कएल छैक।

विश्वनगरः (स्नातकं प्रति)—किमसाधुजनोचितं प्रलपसि । (सुरतप्रियां प्रति) शुभे गम्यतां पाकशालां प्रति वय- [१६ ख]मप्यागच्छन्त एवास्महे ।

सुरतप्रिया—जं भअवं आणवेदि[१]

(इति निष्क्रान्तौ[२])

स्नातकः—भअवं जाव भिक्खा सिज्झदि ताव (एत्थ) ज्जेव भअवं टिट्ठदु अहं उण अणङ्गसेणिआए पउत्तिं जाणिअ लहुँ आगच्छामि

विश्वनगरः—वत्स सहैव गम्यतां[३]

(इत्युभौ परिक्रामतः)

स्नातकः—भअवं मूलणासअणाविदस्स गेहसण्णिधाणे अणंग-सेणिआए भवणं त्ति । मए सुदं ता तस्स ज्जेव अ(णु[४])सारेण अणेसम्हि (अग्रतोवलोक्य ।)

१—एहिठाम 'णिड' लिखि कए काटल छैक।
२—संस्कृत पोथीमे 'निःक्रान्ता' पाठ छैक।
३—आदर्शमे सन्धि कएल छैक 'मि'।
४—ई अक्षरसभ संस्कृत पोथीमे छैक।

भो भअवं पेक्ख[1] पेक्ख । एसा अणङ्गसेणा बार-
विलासिणी विलोइ(अ[2])दि ।

विश्वनगरः—तदागच्छाग्रतः एवैनामुसर्पाव

(इत्येकान्ते स्थतौ ।)

(ततः प्रविशति अनङ्गसेना ॥)

[१७क[3]] मालवरागे ॥ एकतालीताले ।)

कत न कलावति नारि रे आ ।
अत सुविह नित रूप वटोरि रे आ ॥ध्रुवं ॥
सबे सरीर मोर रे आ ।
तथिहि सहास मुखमण्डल मोरा रे आ ॥
कनक बराधर बइसि रे आ
कनकनण्डाइ उगल ससि जनि रे आ ॥
अनङ्गसेना तसु देखि रे आ
मुगुध भगव प(र?)लोक उपेखि रे या ॥

१—एहिठाम '२'मात्र लिखल छैक तेँ दोसर 'पेक्ख' जोड़ल अछि।
२—संस्कृत-धूर्त्तसमागमक ई पाठ थिक। प्रायः 'इ'हुक स्थानमे 'क' मात्र पाठ छलैक।
३—एहि पत्रमे तीनिए पाँती छैक।

कविशेषर एहु भण रे ऱ्या
हरि पय भगत गणेसर जान रे श्रा ॥१३॥

[१७ख[1]] स्नातकः (सहसोपसृत्य)—भअवं पेक्ख अणङ्गसेणाए लावण्यलच्छिम

णीलाम्भोरुहपत्तकन्तणअणा सम्पूर्णचन्दाणणा
उत्तुङ्गत्थणभारभङ्गरतणु वेइव्व मज्झेकिसा ।
बाला मत्तगइन्दमन्दगमणा सुन्देरसोहामइ
नूनं पञ्चसरस्स मोहनलदा सिङ्गारसञ्जीवनी ॥

विश्वनगरः (स्वगतं ·)—

यन्नेत्राञ्चलभङ्गिलङ्गिममयस्मेराननाम्भोरुहा
यत्ने क्रीतविलासहासवसतिर्यत्कर्णरोमोद्गमा ।
यद्भावेङ्गि[१८क]तलङ्गतां तरलतामालोक्य गोपायति
प्रायस्तत् कथयत्यनङ्गरचनामङ्के कृशाङ्गी स्थितां ॥

(प्रकाशं)

वत्स सम्यगुपलक्षितं तथा हि ।

१—एहि पत्रमे तीनिए पाँती लेख छैक ।

यत्तीर्थाम्बुमुखाम्बुजासवरसो नेत्रे नवेन्दीवरे
दन्तश्रेणिनखास्ताक्षतचयो दूर्व्वा च रोमावली ।
उत्तुङ्गं च कुचद्वयं फलयुगं पात्रं (?त्रांकु[1])कराम्भोरुहं
तन्मन्ये मदनार्च्चनाहितमतिः साङ्गोपहारैरियं ॥

(अनङ्गसेनां लक्षीकृत्य)

यत्पूर्वं रचितं तपः प्रतिदिनं या तीर्थयात्रा कृता
यद्भूम्ना पुरुषोत्तमार्चनविधौ चेतः कृतार्थीकृतं ।
य(?त[2])स्यैतत्परमप्रमोदजनकं प्राप्तं फलं कर्म्मण-
-स्तत्किं शास्त्रकथारसेन किमहो स्वर्गेण मोक्षेण वा ॥

(इति कामावस्थां नाटयति ॥)

॥ बरालीरागे ॥ एकताली ताले ॥

जत हरि भगति पुरुबे मन
... ...[3]
[१८ख] अरे हमरे तु मेला गो ॥ ध्रुवं ॥
कतहक मोखेँ परम सुख होइ ।

१—संस्कृत प्रतिमे ई छैक ।
२—संस्कृतपोथीक पाठ ई थिक ।
३—ई पाँती अस्पष्ट छैक ।

कतइ धेआँन परम पद देइ ॥
की फल जपतपवासहि मोराँ
जञो पाओव सनिधान तोहारा ।
मुगुध भगव परलोक उपेखी ।
करइ विनति पुनु नागरि देखी ॥
कविशेषर जोतिक एहु गाव ।
राय हरसिंह बूझए रस भाव ॥ १४ ॥

॥ नाटरागे ॥ यतिताले ॥

चल सरोजसुन्दरनयने ।
मामनुकम्पय शशिवदने ॥ ध्रुवं ॥
राजमरालविदितगमने ।
रतिपति सब हुतवह शमने ।
विशलतिकामृदुभुजयुगले ।
कामकलामयरसकुशले ॥
कामनिधनकलशपयोधरे ।
सञ्जतमुनिजनमनमनोहरे ।
विश्वनगरामिहभजनमिते ।
कविशेषरजोतिक[१८क]भणिते ॥१५॥

॥ कानलरागे ॥ प्रतितालताले ॥

(स्नातकनृत्य ॥)

हरि हरि हरि न सुधेआँन ।
थापहि थीर भगव गेआँन ॥ ध्रुवं ।
हमरि दारा कतहु जानी ।
तेजहि तासु अनुबन्धक हानी ।
खन एक रतिरङ्गतरङ्गे ।
छाड़ गोसाञी जुवतिसङ्गे ।
कुलिश कठिन दण्डपहारे ।
भगवचरित योतिक भासा ।
सुनिञे मन्ति गणेश हासा ॥ १६ ॥

स्नातकः (सवैराग्यं) ॥ (आत्मगतं[१])-एसो लम्पलो उन्दुरुविअरे सप्पो विअ पइट्ठो । भोदु । जुत्तिपहाणेहिं वअणेहिं णिवारइस्सं (प्रकाशं) भअवं तुमं उपेक्खिदसंसार-सोक्खो मोक्खेक्कपरायणो कधं एआरिसे मअति-णहासरिसे पलिअ अप्पाअणं वावादेसि । णिअ-त्तीअदु इमादो दुट्ठगणिञापसङ्गमादो त्ति ॥

१—संस्कृतपोथीक पाठ ई थिक ।

विश्वनगरः [१६ख] (सावज्ञं)—रागे (१वत्स न) एवं पश्यसि

यावद्दष्टिर्मृगाक्षीणां नो नरीनर्ति भङ्गुरा ।
तावज्ज्ञानवतां चित्ते विवेकः कुरुते पदं ।।

अनङ्गसेना (विहस्य)—भअवं धणाधीणो ×(क्खु) अअं जणो त्रात्किं(१स्व अअणोताकिं) एत्थ अरण्णरुदिअं कदुअ अप्पाणअं विलम्बेँसि

विश्वनगरः—प्रिये सन्यासिनाम१स्माकं कुतोऽर्थसम्पत्तिः । तम्मच्छरीरेणैव यथासुखं विनियोगः क्रियतां ।

(सानुरागं)

बाले मृणालदलकोमलबाहुदण्डे
चण्डे प्रसन्नवदने मयि देहि दृष्टिं ।
एष त्वदीयवदनांबुजकृष्टचेता
दीनो यतिः सपदि मज्जति कामसिन्धौ ।।

(इति कामावस्थां नाटयति)

स्नातकः—भो भअवं तुमं उपेक्खिदसंसारसोक्खो (इत्यादि पठति)

अनङ्गसेना (संस्कृतमाश्रित्य पठति)—भगवन्नलमत्रात्यन्तानुबन्धेन यतः

वागर्थं परिगृह्य मोक्षपदवीं ध्यायन्ति निर्म्मत्सराः
बालप्रौ[२०क]ढ़कुलीनवृद्धविषये सर्व्वत्र साधारणाः।
रागद्वेषममत्वकर्षितधियो वेश्याः सुरा भिक्षवो
वस्तुं नन्वपि नित्यमित्यहह किं कामार्णवे मज्जसि ॥

विश्वनगरः—प्रिये गृहाणास्मच्छरीरं

(इति तां अञ्चले धारयति)

स्नातकः (सहसोपसृत्य)—अरे णट्ठपरलोआ दुट्ठपरिव्वाअआ एसा अम्हपरिग्रहेण तुह पुओहु होदि

विश्वनगरः—धिङ्मूर्ख एषास्मद्वधूस्त्वद्गुरुपत्नी मातृतुल्या च तत् किमेनामनुबध्नासि

स्नातकः(सक्रोधं)—अरे (रे[1]) लम्पला एवं भणन्तवस्स दण्डपहारेण पक्कमालुरफलं विअ मुण्डं (दे[1]) थोत्थरं करइस्सं

१—ई संस्कृत पोथीक पाठ थिक ।

(इत्यन्योन्यं कलहं कुरुतः)

अनङ्गसेना (स्वगतं)—कधं धुत्ताहत्थपलिदम्हि । भोदु एवं ताव (प्रकाशितं ।) (?प्रकाशं) भो महाभाअधेआ तुमं एआरिसे महाविवादे असज्जाइमिस्सो पमाणीकरीअदु

विश्वनगरः— प्रिये एवं भवतु

स्नातकः—पिए दहटङ्कआ मए दा[२०ख]दव्वा ता तं गेण्हिअ मह मणोहरं संपादेहि ।

(इति ग्रन्थिं दर्शयति)

विश्वनगरः—- अलं दर्शनेनागच्छाव

(इति निष्क्रान्ताः सर्व्वे)

प्रथमोऽङ्कः ॥

(ततः प्रविशति असज्जातिमिश्रो विदूपकश्च ॥)

शालङ्कीरागे ॥ यतिक त्रिताले ॥

आगम वेद किछु किछु जानिअ
परक वित्त धन्धि घर आनिअ ॥
चलक कोटे ओ (?उ)तरासइ(?हु?ङ्ग)
धोती गरुअ उम्भोस देख(?ा)वे ।
सबइ चाहि बड़ सोति बोलाइ
अपइ(?अपजस) गह के मुह बावे ॥
असत बोलि उपसरपन
लाइअ परकेँ पाणिअ गारी ।
हरि सिर गाहु विरुनि धन
आनिअ बयाल हकारिअ दारी ॥
भणे कविशेपर सुनहु रे
लोक हे ओझा दरसन देवे ।
महामन्ति जीवतु गणेसर(?गणेस रे)
तीस बीस भणे कवे ॥१७॥

असज्जातिः (सप्रमोदं ·) ॥

त्रैलोक्ये भोजनं श्रेष्ठं ततोपि सुरतो[२१क]त्सवः ।
भोजनं वास्तु वा नास्तु जीवनं न रतं विना ॥

वत्स बन्धुवञ्चक आगच्छ अधीष्व

विदूषकः—यं मिस्सो आणवेदि

असज्जातिः—

यद्वामावक्त्रपानं यदलसनयनालोकनं केलिरङ्गे
तस्मादप्यङ्गसङ्गः कुचकलससमुत्पीडने बाहुभङ्गिः ।
एतत्संसारसारं कुरु निजहृदये निर्विकल्पैककल्पं
किन्ते कार्य्यं विवादकथितमतिऋजुग्रन्थकन्थाभरेण ॥

विदूषकः—भो मिस्स पराङ्गणासंभोगादो पि परमन्दिरे सन्धि कल्पिअ जं अत्थो हरीअदि तं ज्जेव तिहुअणसारं पेक्ख

किं वाणिज्जेण कज्जं निअधनविलअं तं क्खु काऊण दुक्खं
किम्वा कज्जं किसीए पसुवसुणिअमाआस णिकज्जिदोए ।
किम्विज्जाए फलं वा मरणसमसमुप्पएण चिन्ताउलाए
एक्कं तेलोअसारं परधनहरणं जूअकीलासुहञ्च ॥

ता एत्थ धुत्तउरणअरे जादि[२१ख]सो तुमं गुरू तादिसो अहं सिस्सो संवुत्तो

असज्जातिः (सवैराग्यं)। अहो नगरेस्मिन्निरुपधिजीवनतया-स्मद्विधश्रोत्रियाणां स्थितिः यतः दिनाष्टतयादारभ्य न कश्चिन्न्यायवादी न कपटश्राद्धप्रतिलम्भी न गणिकाजनालापः

(नेपथ्ये)

भो भो विज्ञायतां असज्जातिमिश्रस्य न्यायकरणार्थं वादिनौ द्वारि वर्त्तते

असज्जातिः (विश्वनगरस्नातकौ निरीक्ष्य स्वगतं)—कथं अनर्थान्तरं आपतितं (प्रकाशं) भगवन्नागन्तुका वयं तन्नात्र भिक्षावसरः

विदूषकः—भो मिस्स एदे ज्जेव वादिणो एदाण विवादं विचारेदु मिस्सो

असज्जातिः (सहर्षं सगर्व्वञ्च)—आसनमुपनीयतां भगवते

[२२क] स्नातकाय च ।

(विदूषकः तथा कृत्वा सर्व्वानुपवेशयति ।)

असज्जातिः—कोऽर्थी कः प्रत्यर्थी च

स्नातकः—भासाए अहं अत्थी । णीअलकरणो पच्चर्थी[१] भअवं

असज्जातिः—न्यायवादिनः प्रथमतो निकरः पश्चाद्भाषोत्तरे तत्क्रियतां भाषोत्तरे

विश्वनगरः—अयमस्मत्सन्यासदण्डो निकरः

स्नातकः—एदं मे इन्दासणकोलिअं णीअरकरणो पविणीअदु

असज्जातिः (सगौरवं गृहीत्वा सप्रमोदं गन्धमाघ्राय च)—किञ्चि-द्विनियुज्यते

निद्राकरं दोषविनाशहेतु
क्षुधाकरं बुद्धिविकाशकञ्च ।
इन्द्रासनं कामकलानुकूलं
लब्धं मया दैववशादिदानीं ॥ [२२ ख]

१—ई शब्द संस्कृतपोथीमे नहि छैक ।

विश्वनगरः—

स्वाधीनयौवना सुभ्रूः
सा मान्या सर्व्वकामिनां।
अस्माभिरियमाक्रान्ता
मदीया तेन वल्लभा ॥

असज्जातिः (भाषां भूमौ लिखित्वा स्नातकं प्रति) स्नातक त्वमुत्तरं कुरु।

स्नातकः—

एसा पुव्वं मए दिट्ठा दाउण दृशटङ्कया
आणीदा अ मदिं दाइं मदीया येन वल्लहा ॥

(असज्जातिः उत्तरमभिलिखति)

विदु · भो मिस्स पेक्ख पेक्ख अणङ्गसेणाए लावण्णलच्छि

मअलञ्छणविम्बफुरन्तमुहो
णअणुप्पलचञ्चलकेलिणिही
थणभारणआ अइमज्झकिसा।
पठमोदिअचन्दकलासरिआ

असज्जातिः (अनङ्गसेनामालोक्य)—अहो निर्म्माणवैदग्धी विधातुः तथा हि [२३क]

नीलोल्लसल्ललितखञ्जनमञ्जुनेत्रा
सम्पूर्णशारदकलानिधिकान्तवक्त्रा ।
बाला जगत्त्रितयमोहनदिव्यमूर्ति-
र्मन्ये विभाति जगति स्मरवीरकीर्तिः ॥

भो वादिनावेषा विवादाध्यासिता अनङ्गसेना जय-पराजयं यावन्मध्यस्थस्थाने स्थाप्यताम् । एवंविध-माध्यस्थे वयमेव नृपतिव्यवस्थापिता मध्यस्थाः ।

(अनङ्गसेनामानीय स्वसन्निधावुपवेश्य तदीयकरे(:रं) हृदयं(?ये) निधाय सप्रमोदं)

विकचकमलकोषश्रीरियं काम्यकान्ति-
र्हिमकरकरजाताच्चन्द्रकान्ताद्धि शीतः ।
मृगमदघनसारामोदसौरभ्यभव्यो
हरति मदनतापं कोमलः पाणिरस्याः ॥

(क्षणं विचार्य्य पुनरुच्चैर्विहस्य)

भो वादिनावेतद्राज्यक्षेत्रे धूर्त्तयोरिव युवयोर्विवादः तथा हि

नैषा त्वदीया भवतोपि नेयं
मत्सं[२३ख]निधिष्ठा सुभगा मदीयं ।।
स्वप्नेपि पूर्व्वं मयि ज्ञातकेलि-
स्ततोपि हेतोः खलु वल्लभा मे ।।

देशापरागे ॥ एकतालीताले ॥

तोहरि ओ नहि के सनातक भगव
तोहरि नहि नारी ।
हमरिए हमरा लग अछ वैसलि
परतप हलिअ विचारी ॥ ध्रुवं ॥
परुकाँ सपने हमे अवलोकलि
हमरि तेहि के न जाने ।।
हारल भगव सनातके दुहु जने
तन्हि असजातिक थाने ।।
कविशेषर जोतिक एहु गावे
राए[1] हरसिंह बुझ भावे ॥१८॥

विदूषकः (अनङ्गसेनामालोक्य जनान्तिकं) । एसो भिस्सो वुड्ढो

१—एहिठाम एकटा विचित्र एहन चिन्ह छैक जकर अर्थ नहि लागल ।

भश्रवं णिद्धणो सणादगे मिच्छारश्रणो ता एदाणं समागमं परिहरिश्र । श्रम्हसमागमेण तुम्ह योव्वणं सफलं भोदु

(इत्यात्मा [२४क]नं दर्शयति)

श्रनङ्गसेना (सस्मितं)—कधं धुत्तसङ्गतए फलहलणं सम्वुत्तं

विश्वनगर: (सवैराग्यं)॥

॥ कोलावरागे · ॥ परिम च(?ठ)ताले · ॥

श्ररे रे सनातक तोरिहि कुमान्ति · ।
श्रनङ्गसेना हरि लेल श्रसजाति ॥ध्रुवं॥
कतए विचार कराश्रोल श्रानि · ।
जन्हिक चरित सुन मूलनाशक जानि ।
हेरित हि हरि धन लए गेल चोर · ।
हाथक रतन हरायल मोर · ।
कके होएबह हरि श्रनुरागे · ।
जोंकक श्राग गोतल न लागे · ।
(कविशेषर जोतिक एहु गाव ।)
राय हरसिंह बूझए रस भाव ॥१६॥

त्रिश्वनगरः—वत्स दुराचार न हि जलौकसामङ्गे जलौका लगति। मूलनासकस्यायम्विचारः तदेहि सुरतप्रिया-स्थानं गच्छाव

(इति निष्कान्तौ द्वाविति ॥)

॥ प्रविश्य [२४ख] पटीक्षेपेण मूलनाशकः ॥

॥ धनछीरागे ॥ एकतालीताले ॥

हमे मूरनासक नाउ
हमे खलनाशक न×
××हमर×××××
जीव एति दिवस परमाउ ॥ ध्रुवं • ॥
बहुल मानुस मोख लाउ
जर जाउ(?आयु) भेल
कतोक थकरब साख।
××××निकान्दलि
आजे मुइल मोर भतार ॥
खउर वार सब हमोहि हकारए
आनल उन रे आउ।
केतु म्वाड (?चाएड)........

जनमे नछतक जाए ।
मोरि न कसो हनि काँत चोट रे ।।
काति खराडाक धारे
मोरि थक तीवर वसिए गेल
खर मोर मीख दुषाव ।
कटइते जोएल निरस ओ अहि (?ओअहि)
आचलि दिठ एह विवाद
कविशेषर जोतिक एहु गाव ए ।।
राए हरसिंह बुझ भाव ए ।।२०।। [२५क]

(।। इति परिक्रम्य ।। मुहूर्तं वीक्ष्य प्रकाशं)

अले ले अणङ्गसेणिए जाणिदे तुम्ह चलिदं जं वालं वालं कअमअणमन्दिर(?कखौल)बेअणं पत्थन्ते बहुवालं हगे तए (प?)आसिदे ता शंपदं पयच्छ ।। अणधा लाअदोहाइ दोइस्सं

अनङ्गसेना—मूलनासअ संपदं ज्जेव असज्जातिमिस्सादो अप्पाणो दाइस्सं ।।

विदूषकः ।। को एसो ।

असज्जातिः— आः किं एष भगवद्गोचरः । पश्य

छिन्नौष्ठनासो गलगण्डभग्नो
वामाक्षिकाणो गलितैकहस्तः ।
श्लीपदव्यापृतदक्षिणाङ्घ्रिः
स मूलनाशः किल नापितोऽसौ ॥

(मूलनाशकश्च सहसोपसृत्य सर्वेषां सप्रमाणमादर्शं दर्शयति ॥)

[२५ख] असज्जातिः -मूलनाशक क्रियतामस्माक नखलोम्नां परिष्कारः ।

मूलनाशकः—भो मिस्स पठमं पअच्छ ।

असज्जातिः—मूलनाशक किमर्थं

मूलनाशकः—भो जदि तुमं पलिक्खलन्ते । पठमं ज्जेव मलिश्शशि ता वेअणं केण प्रतिपिट्ठं

असज्जातिः—अलं परिहासेन गृह्यतामिदं

(सगौरवं गृहीत्वा सप्रमोदं आघ्राय किञ्चित् विनियुज्य मिश्रस्य चरणयोर्बन्धनं कृत्वा व्यापारं नाटयति)

असज्जातिः (सवेदनं)—

दलति हृदयमेतत् मोहमभ्येति चेतः
स्फुटति सकलदेहे कीकसग्रन्थिसन्धिः ।
विरम विरम शिल्पान्मूलनाश त्वमस्मात्
शिव शिव शिव सद्यो जीवितं त्रुट्यतीव ॥

(इति मोहमुपगतः)

परिशिष्ट

धूर्तसमागम-प्रहसनम्

ज्योतिरीश्वर

॥ अथ धूर्तसमागमः ॥

॥ प्रस्तावना ॥

हर्षादम्भोजजन्मप्रभृतिदिविषदां संसदि प्रीतिमत्या
श्वश्वान्मौलौ पुरारेर्दुहितृपरिणये साध्वतं चुम्ब्यमाने ।
तद्वक्त्रं मौलिवक्त्रे मिलितमिति भृशं वीक्ष्य चन्द्रः सहासः
दृष्ट्वा तद्वक्त्रमाशु स्मितसुभगमुखः पातु वः पंचवक्त्रः ॥

अपि च ॥

वक्त्राम्भोरुहि विस्मिताः स्तबकिता वक्षोरुहि स्फारिताः
श्रोणीसीमनि गुम्फिताश्चरणयोरक्ष्णोः पुनर्विस्तृताः ।
पार्वत्याः प्रतिगात्रचित्रगतयस्तन्वन्तु भद्राणि वो
विद्धस्यान्तिकपुष्पसायकशरैरीशस्य दृग्भक्तयः ॥

नान्द्यन्ते सूत्रधारः ॥

यदद्य

नानायोधनिरुद्धनिर्जितसुरत्राणत्रसद्वाहिनी-
नृत्यद्भीमकबन्धमेलकदलद्भूमिभ्रमद्भूधरः ॥

अस्ति श्रीनरसिंहदेवनृपतिः कर्णाटचूडामणिर्-
दृप्यत्पार्थिवसार्थमौलिमुकुटन्यस्ताङ्घ्रिपङ्केरुहः ॥

तस्योद्युक्तभुजप्रतापदहनज्वालानिरस्तापदो
राज्ञः सर्वगुणानुवादपदवीविद्योतनाचार्यकः ।
यो धीरेश्वरवंशमौलिमुकुटो दातावदाताशयस्-
तस्य श्रीकविशेखरस्य कविता मच्चित्तमालम्बते ॥

तदनेन सकलसंगीतविशेषविद्योतनाभिनवभरतेन पुरमथनपदारविन्दद्वन्द्ववन्दारुकरपल्लवेन निखिलभाषोपभाषाशुभभावुकसरस्वतीकण्ठाभरणेन अनवरतसोमरसास्वादकषायकण्ठकन्दलीनरीनृत्यमानमीमांसामहोत्सवेन रामेश्वरस्य पौत्रेण तत्रभवतः पवित्रकीर्तेर्धीरेश्वरस्यात्मजेन महाशासनश्रेणिशिखरभ्रामत्पल्लीजन्मभूमिना कविशेखराचार्यज्योतिरीश्वरेण निजकुतूहलविरचितं धूर्तसमागमनाम प्रहसनमभिनेतुमादिष्टोऽस्मि । तस्य चादिष्टमवश्यमिष्टं मालतीमालेव मया शिरोधरणीयं ॥ तथा हि—

कर्पूरन्ति सुधाद्रवन्ति कमलाहासन्ति हंसन्ति च
प्रालेयन्ति हिमालयन्ति करकासारन्ति हारन्ति च ।

त्रैलोक्यांगणरंगलङ्गिमगतिप्रागल्भ्यसंभाविताः
शीतांशोः किरणच्छटा इव जयन्त्येतर्हि तत्कीर्तयः ॥

अपि च—

के नार्चिता दिविषदः कति न द्विजेशाः
संतर्पिता न कवयः कति पूजिता वा।
के चार्थिनः प्रतिदिनं न कृताः कृतार्थास
त्यागप्रसादपटुना कविशेखरेण ॥

तत् प्रेयसीमाहूय संगीतकमवतरामि।

नेपथ्याभिमुखमवलोक्य

आर्ये इतस्तावत्।

॥ प्रविश्य नटी ॥

अज्ज एसम्हि। आणवेदु अज्जो। को णिओओ पसाई-करीअदुत्ति ॥[1]

॥ सूत्रधारः ॥

आर्ये अपि न जानासि ?

यश्चत्वारि शतानि बन्धघटनालङ्कारभाञ्जि द्रुतं
श्लोकानां विदधाति कौतुकवशादेकाहमात्रे कविः।

[1] आर्यं एषास्मि। आज्ञापयत्वार्यः। को नियोगः प्रसादीक्रियतां इति।

ख्यातः क्ष्मातलमण्डलेष्वपि चतुःषष्टेः कलाया निधिः
संगीतागमसागरो विजयते श्रीज्योतिरीशः कवी ॥

तद्विरचितं धूर्तसमागमनाम प्रहसनमभिनेतुमारब्धमिति गीयतां नाट्योचितं किंचित् ॥

॥ नटी ॥ सविनयं

आणवेदु अज्जो को एत्थ पबन्धे पहाणो रसो जं उद्दिसिअ गाइस्सं ।[1]

॥ सूत्रधारः ॥

ननु प्रोत्फुल्लमालतीमकरन्दसान्द्रामोदमत्तमधुकरझङ्कारमुखरो वसन्तः संततो ज्जृम्भितानङ्गशृंगार एव । तथा हि

विकसितनवमल्लीकुञ्जगुञ्जद्द्विरेफः
कुसुमितसहकारश्रेणिनिर्यत्परागः ।
प्रमुदितपिककण्ठप्रोच्छलन्मञ्जुलश्रीर्-
अपहरति मुनेरप्येष चेतो वसन्तः ॥

॥ नटी ॥

मलआणिल चालिअचूअवणो
कलकण्ठिसराहिदकामिअणो ।

---

[1] आज्ञापयत्वार्यः कोऽस्मिन् प्रबन्धे प्रधानरसो यमुद्दिश्य गास्यामि ।

मअरन्दविमत्तसिलीमुहओ
सुरहीकिदसव्वदिसामुहओ ॥

एसो वसन्तमासो मुणिअणसत्थस्स राअरहिदस्स ।
उम्मूलिअ गरुधीरं करेइ वम्महवसं हिअअं ॥[1]

इति । गीयते नेपथ्ये

दण्डकमण्डलुमण्डितहस्तः
सुललिततिलकविभूषितमस्तः ।
अयमुपसर्पति जंगमलोभश्-
चलकाषायपटार्पितशोभः ॥

अज्ज को एसो परिक्खलन्तणिद्धोअकसाअवसणो दण्ड-कुण्डआहत्थो धुत्तो विअ इदो तदो विलोएन्तो दीसदि ॥[2]

---

[1]मलयानिलचालितचूतवनः । कलकण्ठस्वराहूतकामिजनः ।
मकरन्दविमत्तशिलीमुखकः । सुरभीकृतसर्वदिशामुखकः ।
एष वसन्तमासो मुनिजनसार्थस्य रागरहितस्य ।
उन्मूल्य गुरु धैर्यं करोति मन्मथवशं हृदयं ॥

[2]आर्य क एष परिस्खलन्निर्धौतकषायवसनो दण्डकुण्डिकाहस्तो धूर्त इव इतस्ततो विलोकयन् दृश्यते ॥

॥ सूत्रधारः ॥

आर्ये ।

यः श्रूयते जनमुखात् तुरगक्रियावान्
आचारधर्मरहितो गणिकाविलासी ।
दीर्घोर्द्ध्वपुण्ड्रककमण्डलुदण्डलक्ष्यः
पुष्णाति विश्वनगरः किल दम्भमुग्रं ॥

तदेतस्य दर्शनं दूरत एवाहरणीयं ॥

इति निष्क्रान्तो

॥ इति प्रस्तावना ॥

॥ प्रथमोऽङ्कः ॥

ततः प्रविशति यथानिर्दिष्टः स्नातकेनानुगम्यमानो विश्वनगरः ॥

॥ विश्वनगरः ॥ ॥ सनिर्वेदः ॥

हृदयकमलमध्ये निर्गुणो निष्प्रपञ्चस्
त्रिभुवनपतिरेको ध्यायते योगिभिर्यः ।
तमहमजरमाद्यं ज्ञानमात्रैकवेद्यं
मधुमथनमुदारं संततं चिन्तयामि ॥

॥ स्नातकः ॥ समन्तादवलोक्य स्वगतं

[1]अहो रमणीअदा वसन्तस्स । जदो

उम्मीलन्तं पसूणं रइरसकुसला छप्पदा वम्महन्धा
कन्तारङ्गाणुरत्ता महुरसभविअं साणुराअं पिवन्ति ।

---

[1]अहो रमणीयता वसन्तस्य यतः—

उन्मीलत् प्रसूनं रतिरसकुशला षट्पदा मन्मथान्धाः
कान्तारङ्गानुरक्ता मधुरसभवितं सानुरागं पिबन्ति ।
उद्गायन्ति स्फुरन्तस्त्रिभुवनजयिनः कामरागस्य कीर्तिं
संवित्तिं हारयन्तः प्रियजनविरहे कोकिलाः कामिनीनां ॥

उग्गाअन्ति प्फुरन्ता तिहुअणजइणो कामराअस्स कित्तिं
संवित्तिं हारअन्ता पिअअणविरहे कोइलाकामिणीणं ॥

अवि अ ।[1]

जे कप्पूरं हरन्ता कमलवणसिरिं लोलअन्ता सहावं ।
साहाओ कम्पअन्ता णिहुअणसुहआ चन्दणाणं वणाणं ।
ते कन्दप्पस्स मित्ता रइतणुरमणी केलिदप्पं कुणन्ता ।
तेल्लोअं मोहन्ता मलअसिहरिणो सीअला वान्ति वाआ ।

त कधं एसो अइदूसहो वसन्तसमओ मए एक्कसरीरेण सहिदव्वो ॥

इति वैमनस्यं नाटयति

॥ विश्वनगरः ॥ स्नातकं निर्वर्ण्य

अये दुराचार कथमद्य चिन्ताभारनतकन्धरोऽन्यादृश इव दृश्यसे । तथा हि

---

[1]अपि च । ये कर्पूरं हरन्तः कमलवनश्रियं लोडयन्तः सभावं । शाखाः कम्पयन्तो निधुवनसुखदाश्चन्दनानां वनानां । ते कन्दर्पस्य मित्राणि रतितनुरमणीकेलिदर्पं कुर्वाणास्तस् । त्रैलोक्यं मोहयन्तो मलयशिखरिणः शीतला वान्ति वाताः ॥ तत् कथं एष अतिदुःसहो वसन्तसमयो मया एकशरीरेण सोढव्यः ॥

निःश्वासे पीवरत्वं वपुषि सुतनुता शून्यता दृष्टिपाते ।
वक्त्रेन्दौ धूसरत्वं गतिषु विधुरता चेतसि म्लानता च ।
चेष्टा नैवेक्ष्यते ते यदधिकविकलं रूपमासादितस्त्वं ।
तन्मन्ये पञ्चबाणस्तिरयति भवतो धीरतां पूर्वरूपां ॥

॥ स्नातकः ॥ सलज्जमधोमुखः स्थित्वा

[1]भअवं अदिलज्जाकरं क्खु एदं । ता ण जुत्तं तुम्ह पुरदो पआसिदुं

॥ विश्वनगरः ॥

न दोषः स्वरूपाख्याने । तत् कथ्यतां ॥

॥ स्नातकः ॥ सप्रणयं

[2]भअवं अज्ज मए महापहादे णअरपोक्खरिणीपरिसरे

---

[1]भगवन्नतिलज्जाकरं खलु एतत् । तन्न युक्तं युष्माकं पुरतः प्रकाशयितुं ।

[2]भगवन्नद्य मया महाप्रभाते नगरपुष्करिणीपरिसरे उपहसितसुरनागरीरूपसम्पत्तिरनङ्गसेना नाम वारविलासिनी विलोकिता । ततः प्रभृति सर्वगतां तामेव प्रेक्षे ।

उवहसिदसुरणाअरीरूवसंपत्ती अणङ्गसेणा णाम वारविलासिणी विलोइदा । तदो पहुदि सव्वगदं तं ज्जेव पेक्खामि ॥

॥ विश्वनगरः ॥ सहस्ततालमुच्चैर्विहस्यं

वत्स अद्य मयापि तत्रैव सुरतप्रिया नाम मासोपवासिनी दृष्टा । तामनुसंदधानोऽहमपि मर्मभेदिना कामवाणेन संदलित एव । तथा हि

आकाशे लिखितेव दिक्षु खचितेवाकीर्णरूपेव च
दृक्पद्मप्रतिबिम्बितेव मनसि श्लिष्टेव बद्धेव च ।
सा मच्चित्तपरोरुहे मधुकरीवात्यन्तभावोत्तरा
कान्ता कान्तविलासवासवसतिः क्वास्तीति न ज्ञायते ॥

ऊर्द्ध्वमवलोक्य

वत्स मध्याह्नमारूढो भगवान् सहस्रांशुः । तथा हि

दिक्चक्रं मृगतृष्णया कवलितं व्योमापि भास्वत्कर-
च्छायाभिश्छुरितं तुषानलकणप्रायाश्च भूरेणवः ।
पान्थाः पल्वलसंकुलद्रुमलताकुञ्जोदरे शेरते
मज्जत्कुञ्जरपानलोहितजलाः क्षुभ्यति तोयाशयाः ॥

तद्धित्ताकरणार्थमत्रैव कमपि गृहमेधिनमनुसराव ॥

इति पराक्रमतः

॥ स्नातकः ॥ अग्रतोवलोक्य

[1] भो भअवं पेक्ख पेक्ख विहिदभअवन्तजणमुण्डसरिच्छ-बहुअरमहिसीखम्भसोहन्तचउस्सालं इदोतदोसंचरन्तबालगोच्छ-सोहिदं पीणुत्तुङ्गत्थणालसपरिक्खलन्तमन्दसंचाररमणिज्जा-वासपरिसरसंचरन्तचेलिआसमूहं कस्स वि महाधणस्स वासभअणं विलोईअदि ।

[2] भो भो णाअरा कस्स इदं वासभअणं ॥

इति पठति । नेपथ्ये

लक्ष्मीविवर्तरसविघ्नितसर्वभोगः ।

शश्वत्प्रकीर्णधनचिन्तितवीतनिद्रः ।

---

[1]भो भगवन् प्रेक्षस्व प्रेक्षस्व विहितभगवज्जनमुण्डसदृशबहुतरमहिषीस्तम्भ-शोभमानचतुःशालं इतस्ततः संचरद्बालगोवत्सशोभितं पीनोत्तुङ्गस्तनालसपरिस्ख-लन्मन्दसञ्चाररमणीयावासपरिसरसञ्चरच्चेटिकासमूहं कस्यापि महाधनस्य वास-भवनं विलोक्यते ॥

[2]भो भो नागराः कस्येदं वासभवनं ।

अग्राह्यनामकतया भुवि यः प्रसिद्धस्
तस्यैतदाश्रमपदं पुरतो विभाति ॥

॥ स्नातकः ॥ अग्रतो गत्वा पुनः

भो भो णाअरा कस्स इदं वासभअणं

इति पठति । पुनर्नेपथ्ये लक्ष्मीत्यादि

॥ विश्वनगरः ॥

आः क एष नामग्रहणे भवतो निर्बन्धः । अथवा यद्वा तद्वास्तु श्रूयतां । मृताङ्गारठक्कुरस्याश्रमोयं । वत्स अलं विलम्बेन । वासाभ्यन्तरं प्रविशाव ॥

इत्यावासप्रवेशं नाटयित्वा एकान्ते स्थितौ । ततः प्रविशति कश्मलवेशो मृताङ्गारः

॥ मृताङ्गारः ॥

व्ययशीलः कुबेरोपि कामं याति दरिद्रतां ।
अपि प्राणाः प्रदातव्या नार्थिभ्यो धनिकैर्धनं ॥

॥ स्नातकः ॥ उपसृत्य

[1]भो महाबह्मणा भअवन्तोविस्सणअरचरणा तुम्हाणं गेहे भिक्खं भुञ्जिदुं इछन्ति ॥

॥ मृताङ्गारः ॥ स्वगतं

अहो दुर्दैवमस्माकं यदेतान् सकलनगरीयाद्यलोकान् विहा मय्येव पतितो धूमकेतुः तत् कः प्रतीकारोद्य भविष्यति ॥

इति विचिन्त्य तावत् प्रकाशं सविनयं

स्थाने यस्य चरन्ति भैक्ष्यमनघाः स्नेहेन युष्मादृशः
स स्यादच्युतमूर्तिसेवनवशाद्धन्यः पवित्रालयः ।
किंत्वस्मत्प्रतिवेशिविप्रवनिता भ्रातृप्रसक्ताङ्गना
दूती प्रसवेति सूतकमतः स्थानान्तरं गम्यतां ॥

॥ विश्वनगरः ॥ स्वगतं

अहो दुरात्मनोस्य व्याजव्यवहारः । भवतु वा । तत् प्रबोधयामि ।

---

1. भो महाब्राह्मणा भगवन्तो विश्वनगरचरणा युष्माकं गेहे भिक्षां भोक्तुमिच्छन्ति ॥

प्रकाशं

आयुष्मन् यतीनामस्माकं कुतः सूतकदोषः । तथा च स्मृतिः

न वायुः स्पर्शदोषेण नाग्निर्दहनकर्मणा ।
नापो मूत्रपुरीषाभ्यां नान्नदोषेण मस्करी ॥

॥ मृताङ्गारः ॥ सविनयं

भगवन् यद्यप्येवं तथापि न संभवति । पश्य

अनावृष्ट्या कृषिर्नष्टा राष्ट्रभङ्गाद्दणादिकं ।
वाणिज्यमल्पलाभेन प्रातराशस्य का कथा ॥

॥ स्नातकः ॥ सक्रोधं संस्कृतमाश्रित्य

धिङ् मौर्ख्यं जलधिसुतायाः श्रियः

नो जानाति कुलीनमुत्तमगुणं सत्वान्वितं धार्मिकं
नाचारप्रवणं न कार्यकुशलं न प्रज्ञयालंकृतं ।
नीचं क्रूरमपेतसत्त्वहृदयं यस्मादियं सेवते
तत् त्वं सानुगुणः पयोधिसुतया लक्ष्म्या प्रमाणीकृतः ॥

[1]अरे णट्ठपरलोआ दुट्ठबह्मणा ईदिसे दूसह मज्झण्हे पठमं

---

[1]अरे नष्टपरलोक दुष्टब्राह्मण ईदृशे दुःसहमध्यान्हे प्रथमं त्वां महाधनं भिक्षित्वा कुतोऽन्यतो गत्वा अस्माभिर्भिक्षा ।

तुमं महाधणं भेक्खिअ कुदो अणदो गदुअ अम्हेहि भिक्खा पत्थिदव्वा ।

॥ मृताङ्गारः ॥

भगवन्नस्मदावासोत्तरं सुरतप्रिया नाम मासोपवासिनी प्रतिवसति । तत्र गम्यतां ॥

इत्यभिधाय सत्वरं परिक्रान्तः

॥ विश्वनगरः ॥

यद्येवं ततः समीहितमेव नः संपन्नं । तदेहि तत्रैव गच्छाव ॥

इति परिक्रामतः ॥ स्नातकः ॥ पुरोवलोक्य गन्धमाघ्राय

[1] भअवं पेक्ख पेक्ख एकाङ्गिआमुत्थमेत्थिआसंजुत्तमहाहन्दकुट्ठपरिमलुग्गारो अग्गिमभवणादोणं सेवदि । ता एद ज्जेव सुरतप्पिआए वासभवणं ॥

---

[1] भगवन् प्रेक्षस्व प्रेक्षस्व एकाङ्गिकामुस्तमात्रिकासंयुक्तमहाकन्दकुष्ठपरिमलोद्गारोऽग्रिमभवनादेनां सेवते । तदेतदेव सुरतप्रियाया वासभवनं ॥

॥ विश्वनगरः ॥

विदग्धैव किल मासोपवासिनीति किंवदन्ती । तदागच्छोपसर्पाव ॥

इत्येकान्ते स्थितौ । ततः प्रविशति सुरतप्रिया

॥ सुरतप्रिया ॥

[१] धम्मो ण इट्ठो बहुदुक्खचेट्ठो
मोक्खेण सोक्खं मम अत्थि सच्चं ।
अत्थो समत्थो सअलं विधादुं
अणङ्गसव्वस्सकलाणिहाणं ॥

॥ स्नातकः ॥ उपसृत्य

[२] अज्जे विस्सणअरो तुम्हाणं अदिधी उअत्थिदो ॥

---

[१] धर्मो न इष्टो बहुदुःखचेष्टो मोक्षेण सौख्यं ममास्ति सत्यं । अर्थः समर्थः सकलं विधातुं अनङ्गसर्वस्वकलानिधानं ॥

[२] आर्ये विश्वनगरो युष्माकमतिथिरुपस्थितः ॥

॥ सुरतप्रिया ॥ परिक्रम्यावलोक्य च

[1] ता उअसप्पामि । उपसृत्य । भअवं पणमामि ॥

॥ विश्वनगरः ॥ सप्रमोदं

मदभिलसितभाजनं भूयाः ॥

सुरतप्रिया

[2] भअव तुम्हाण पसादेण

विश्वनगरः

एवमचिरादस्तु ॥

सुरतप्रिया

[3] आणावेदु भअव जं मए कादव्वं दाअव्वं च ॥

विश्वनगरः

शुभे किमदेयमस्माकं भवत्या । सांप्रतं भिचैव तावत् ॥

---

[1] तदुपसर्पामि । भगवन् प्रणमामि ।

[2] भगवन् युष्माकं प्रसादेन ।

[3] आज्ञापयतु भगवान् यद् मया कर्तव्यं दातव्यं च ।

सुरतप्रिया

[1] भअव कीदिसी भिक्खा कीदिसीए वेलाए केत्तिआइं ते अण्णाइं ॥

॥ विश्वनगरः ॥ सहर्षः

श्रूयतां ।

मांसं माष१टोलतक्रवडिकावास्तूकशाकं वटः ।
संजीवन्यथ मत्स्यमुद्गविदलप्रायः प्रकारोत्करः ।
स्वादिष्टं च पयो घृतं दधि नवं रम्भाफलं शर्करा ।
संक्षेपादिति साध्यतां सुवदने भिक्षा मदीया द्रुतं ॥

॥ सुरतप्रिया ॥ विहस्य स्वगतं

[2] हं एसो महप्पा अप्पविसज्जणजोग्गो ज्जेव देववरस्स पसाएण संपण्णो ।

---

[1] भगवन् कीदृशी भिक्षा कीदृश्यां बेलायां कियन्ति ते अन्नानि ।
[2] हूं एष महात्मा आत्मविसर्जनयोग्य एव देववरस्य प्रसादेन सम्पन्नः ।

ज्योतिरीश्वर

प्रकाशमञ्जलिं बद्ध्वा

[1] एदं सरीरं विरहेण जुत्तं ।
पाणा तहा धम्मफलेक्कसारा ।
सव्वं तुहाअत्तं उदारकित्ति ।
का वाहिरे वत्थुणि अत्थि अत्था ।

[2] ता अन्तरघरं पविसिअ वीसमीअदु भअवं । अहं उण भिक्खापआरं करोमि ।

॥ स्नातकः ॥ सोपहासं

[3] भअवं पेक्ख पेक्ख ।

---

[1] इदं शरीरं विरहेण युक्तं, प्राणास्तथा धर्मफलैकसाराः । सर्वं त्वदायत्तमुदारकीर्ते । का बाह्यवस्तुनि अस्ति आस्था ॥

[2] तस्मादन्तरगृहं प्रविश्य विश्राम्यतां भगवान् । अहं पुनर्भिक्षाप्रकारं करोमि ।

[3] भगवन् प्रेक्षस्व प्रेक्षस्व ॥

ज्योतिरीश्वर

प्रकाशमञ्जलिं बद्ध्वा

[1] एदं सरीरं विरहेण जुत्तं ।
पाणा तहा धम्मफलैक्कसारा ।
सव्वं तुहाअत्तं उदारकित्ति ।
का वाहिरे वत्थुणि अत्थि अत्था ।

[2] ता अन्तरघरं पविसिअ वीसमीअदु भअवं । अहं उण भिक्खापआरं करोमि ।

॥ स्नातकः ॥ सोपहासं

[3] भअवं पेक्ख पेक्ख ।

---

[1] इदं शरीरं विरहेण युक्तं, प्राणास्तथा धर्मफलैकसाराः । सर्वं त्वदायत्तमुदारकीर्ते । का वाह्यवस्तुनि अस्ति आस्था ॥

[2] तस्मादन्तरगृहं प्रविश्य विश्राम्यतां भगवान् । अहं पुनर्भिक्षाप्रकारं करोमि ।

[3] भगवन् प्रेक्षस्व प्रेक्षस्व ॥

संस्कृतमाश्रित्य

पक्वाः कुन्तलराजयः कटकटाक्षामौ कपोलावुभाव्
एतस्याः स्तनमण्डलं निपतितं शुष्का नितम्बस्थली ।
दृक्पातस्मितभाषितैः शिव शिव प्रस्तौति नेत्रोत्सवं
किं ब्रूमः करवाम वेति किमियं दुष्टा जरत्तापसी ॥

विश्वनगरः

धिङ् मूर्ख किमसाधुजनोचितं प्रलपसि ॥

सुरतप्रियां प्रति

शुभे गम्वतां पाकशालां प्रति । वयमप्यागच्छन्त एवास्महे ॥

सुरतप्रिया

[१] जं भअवं आणवेदि ॥

इति निष्क्रान्ता ॥

स्नातकः

[२] भअवं जाव भिक्खा सिज्झदि ताव एत्थ ज्जेव भअवं

---

[१] यद्भगवानाज्ञापयति ।

[२] भगवन् यावद्भिक्षा सिध्यति तावदत्रैव भगवान् तिष्ठतु । अहं पुनरनङ्गसेनिकायाः प्रवृत्तिं ज्ञात्वा लघु आगच्छामि ॥

टिट्ठदु । अहं उण अणङ्गसेणिआए पउत्तिं जाणिअ लहुं आअ-
च्छामि ॥

विश्वनगरः

वत्स सहैव गम्यतां ॥

इत्युभौ परिक्रामतः

॥ स्नातकः ॥

[1] भअवं मूलणासअणाबिदस्स गेहसण्णिहाणे अणङ्गसेणाए वासभवणं त्ति मए सुदं । ता तस्स ज्जेव अणुसारेण अण्णेसम्ह ॥

अग्रतोवलोक्य

भअवं पेक्ख पेक्ख । एसा अणङ्गसेणा सुरविलासिणी विअ विलोईअदि ॥

विश्वनगरः

तदागच्छाग्रतः । एनामुपसर्पाव ॥

---

[1] भगवन् मूलनाशकनार्पितस्य गेहसंनिधाने अनङ्गसेनाया वासभवनं। इति मया श्रुतं । तस्मात् तस्यैवानुसारेणान्वेषामहे ॥ भगवन् प्रेक्षस्व प्रेक्षस्व। एषानङ्गसेना सुरविलासिनीव विलोक्यते ॥

इत्येकान्ते स्थितौ । ततः प्रविशति अनङ्गसेना

॥ स्नातकः ॥ सहसोपसृत्य

[1] भअव पेक्ख पेक्ख अणङ्गसेणाए लावण्णलच्छि ।
णीलम्भोरुहपत्तकन्तणअणा संपुण्णचन्द्राणणा ।
उत्तुङ्गत्थणभारभङ्गुरतणू वेइव्व मज्झे किसा ।
बाला मत्तगइन्दमन्दगमणा सुन्देरसोहामई ।
णूणं पंचसरस्स मोहणलआ सिङ्गारसञ्जीवणी ॥

विश्वनगरः ॥ स्वागतं ॥

यन्नेत्राञ्जनभङ्गिलङ्गिममथस्मेराननाम्भोरुहा
यत् साकूतकलाविलासवसतिर्यत् कान्तरोमोद्गमा ।
मद्भावेङ्गितसंगतिं तनुलतामालोक्य गोपायति
प्रायस्तत् कथयत्यनङ्गरचनामङ्के कृशाङ्गी स्थितां ॥

---

[1] भगवन् प्रेक्षस्व प्रेक्षस्वानङ्गसेनाया लावण्यलक्ष्मीं । नीलाम्भोरुहपत्रकान्तनयना सम्पूर्णचन्द्रानना । उत्तुङ्गस्तनभारभङ्गुरतनुर्वेदिरिव मध्ये कृशा । बाला मत्तगजेन्द्रमन्दगमना सौन्दर्यशोभामयी । नूनं पञ्चशरस्य मोहनलता श्रृङ्गारसंजीवनी ॥

प्रकाशं

सम्यगुपलक्षितं । तथा हि

यत् तीर्थाम्बु मुखाम्बुजासवरसो नेत्रे नवेन्दीवरे
दन्तश्रेणिनखास्तताक्षतचयो दूर्वा च रोमावली ।
उत्तुङ्गं च कुचद्वयं फलयुगं पत्रं कराम्भोरुहं
तन्मन्ये मदनार्चनाहितमतिः स्वाङ्गोपहारैरियं ॥

अनङ्गसेनां लक्षीकृत्य ॥

यत् पूर्वं रचितं तपः प्रतिदिनं या तीर्थयात्रा कृता
यद्भूम्ना पुरुषोत्तमार्चनविधौ चेतः कृतार्थीकृतं ।
तस्यैतत् परमप्रमोदजनकं प्राप्तं फलं कर्मणस्
तत् किं शास्त्रकथारसेन किमहो स्वर्गेण मोक्षेण वा ॥

इति कामावस्थां नाटयति

॥ स्नातकः ॥ सहर्षवैराग्यं स्वगतं

[1] एसो लम्पडो उन्दुरुविअरे सप्पो विअ पइट्ठो । भोदु । जुत्तिपहाणेहिं वअणेहिं णिवारइस्सं ॥

---

[1] एष लम्पट उन्दुरुविवरे सर्प इव प्रविष्टः । भवतु युक्तिप्रधानैर्वचनैर्निवारयिष्यामि ॥ भगवन् त्वमुपेक्षितसंसारसौख्यो मोक्षैकपरायणः कथं एतादृशे मृगतृष्णासदृशे मदनरसे पतित्वा आत्मानं व्यापादयसि । निवर्त्यतां अस्माद् दुष्टगणिकाप्रसङ्गादिति ॥

प्रकाशं

भगवं तुमं उपेक्खिदसंसारसोक्खो मोक्खेकपराअणो कधं एआरिसे मअतिण्हासरिसे मअणरसे पलिअ अप्पाअणं वावादेसि । णिअत्तीअदु इमादो दुट्ठगणिआपसंगादो त्ति ॥

॥ विश्वनगरः ॥ सावज्ञं

वत्स नैवं पश्यसि

याबद्दृष्टिर्मृगाक्षीणां न नरीनर्ति भङ्गुरा ।
तावज्ज्ञानवतां चित्ते बिवेकः कुरुते पदं ॥

॥ अनङ्गसेना ॥ विहस्य

[1] भअवं धणाधीणो क्खु अअं जणो । एत्थ अरण्णरुदिअं कदुअ अप्पाणअं विडम्बेसि ॥

---

[1] भगवन् धनाधीनः खलु अयं जनः । अत्र अरण्यरुदितं कृत्वात्मानं विडम्बयसि ॥

विश्वनगरः

सन्यासिनामस्माकं कुतोऽर्थसंपत्तिः । तदस्मच्छरीरेण यथासुखं विनियोगः क्रियतां ।

सानुरागं

बाले मृणालदलकोमलबाहुदण्डे
चण्डि प्रचण्डवदने मयि देहि दृष्टिं ।
एष त्वदीयवदनाम्बुजकृष्टचेता
दीनो यतिः सपदि मज्जति कामसिन्धौ ।।

स्नातकः

भो भअवं तुमं उपेक्खिदसंसारसोक्खो

इत्यादि पठति

।। अनङ्गसेना ।। संस्कृतमाश्रित्य

भगवन्नलमत्रात्यन्तानुसंधानेन ।

वागर्थं परिगृह्य मोक्षपदवीं ध्यायन्ति निर्मत्सराः
शान्तप्रौढकुलीनहीनविषये सर्वत्र साधारणाः ।

रागद्वेषममत्वकर्षितधियो वेश्याः सुरा भिक्षवो ।
वस्तुं नन्वपि नित्यमित्यहह किं कामार्णवे मज्जसि ॥

विश्वनगरः

प्रिये गृहाणास्मच्छरीरं ॥

इत्यञ्चले धारयति

॥ स्नातकः ॥ सहसोपसृत्य

[1] अरे णट्ठपरलोश्रा दुट्ठपरिव्वाश्रश्रा एसा पठमं श्रह्मपरिग्गहेण तुह पुत्तबहू होदि । ता मुञ्च एणं ।

विश्वनगरः

धिङ् मूर्ख एषास्मद्बधूस्त्वद्गुरुपत्नी मातृतुल्या च । तत् किमेनामनुबध्नासि ॥

॥ स्नातकः ॥ सक्रोधं

[2] अरे रे लम्पडा एवं एवं भणन्तस्स दण्डप्पहारेण पक्कमालूरफलं विश्र मुण्डं दे थत्थरं करइस्सं ॥

---

[1] अरे नष्टपरलोक दुष्टपरिव्राजक एषा प्रथममस्मत्परिग्रहेण तव पुत्रबधूर्भवति । तस्माद् मुञ्चैनां ॥

[2] अरे रे लम्पट एवं एवं भणतो दंडप्रहारेण पक्वमालूरफलमिव मुण्डं तव खंडशः करिष्यामि ॥

इत्यन्योन्यं कलहं कुरुतः

॥ अनङ्गसेना ॥ स्वगतं

[1] कधं धुत्तहत्थपलिदह्मि । भोदु एवं ताव ॥

प्रकाश

भो महाभाअधेआ तुम्हाणं एआरिसे महाविवादे असज्जाइ-मिस्सो पमाणीकरीअदु ॥

विश्वनगरः

प्रिये भवतु ॥

स्नातकः

[2] पिए दसटङ्कआ मए दादव्वा । ता तं गेण्हिअ मह मणोहरं संपादेहि ॥

---

[1] कथं धूर्तहस्तपतितास्मि । भवतु एवं तावत् । भो महाभागधेयौ युष्माकमेतादृशे महाविवादे असज्जातिमिश्रः प्रमाणीक्रियतां ॥

[2] प्रिये दशटङ्कका मया दातव्याः । तस्मात् तद् गृहीत्वा मम मनोहरं संपादय ।

इति ग्रन्थिं दर्शयति

॥ विश्वनगरः ॥

अलं ग्रन्थिदर्शनेन । आगच्छतं । तत्रैव गच्छामः ॥

इति निष्क्रान्ताः सर्वे ॥

इति प्रथमाहः संधिः ॥

द्वितीयोऽङ्कः

ततः प्रविशति असज्जातिमिश्रो विदूषकश्च

॥ असज्जातिमिश्रः ॥

सप्रमोदनं

त्रैलोक्ये भोजनं श्रेष्ठं ततोऽपि सुरतोत्सवः ।
भोजनं वास्तु वा नास्तु जीवनं सुरतं विना ॥

वत्स बन्धुवंचक आगच्छाधीष्व ॥

विदूषकः

[1] जं मिस्सो आणवेदि ॥

असज्जातिमिश्रः

यद्वामावक्त्रपानं यदलसनयनालोकनं केलिरङ्गे
यः स्यादप्यङ्गसङ्गः कुचकलससमुत्पीडने बाहुभङ्गिः ।
एतत् संसारसारं कुरु निजहृदये निर्विकल्पैककल्पं
किं ते कार्यं विवादक्वथितऋजुमतिग्रन्थकन्थाभरेण ॥

[1] यद् मिश्र आज्ञापयति ।

॥ विदूषकः ॥

[1] भो मिस्स पराङ्गणासंभोगादो पि परमन्दिरे संधिं कदुअ जं अत्थो अवहरीअदि तं ज्जेव तिहुअणसारं । पेक्ख पेक्ख ॥

किं वाणिज्जेण कज्जं णिअधणविलअं तं क्खु काऊण दुक्खं
किंवा कज्जं किसीए पसुवसुणिअमाआसणिक्कज्जदाए ।
किं विज्जाए फलं वा मरणसमसमुप्पण्णचिन्ताउलाए
एक्कं तेल्लोअसारं परधणहरणं जूअकीलासुहं च ॥

ता एत्थ धुत्तउरणअरे जादिसो तुमं गुरू तादिसो अहं सिस्सो संवुत्तो ॥

॥ असज्जातिमिश्रः ॥

अहो अस्मिन् नगरे निरुपाधिजीवनतास्मद्विधश्रोत्रियाणां ।

---

[1] भो मिश्र पराङ्गनासंभोगादपि परमन्दिरे संधिं कृत्वा यदर्थोविह्रियते तदेव त्रिभुवनसारं । प्रेक्षस्व प्रेक्षस्व । किं वाणिज्येन कार्यं निजधनविलयं तं खलु कृत्वा दुःखं किं वा कार्यं कृष्या पशुवसुनियमायासनिष्कार्यतया । किं विद्यायाः फलं वा मरणश्रमसमुत्पन्नचिन्ताकुलायाः एकं त्रैलोक्यसारं परधनहरणं द्यूत-क्रीडासुखं च ॥ तदत्र धूर्तपुरनगरे यादृशस्त्वं गुरुस्तादृशोहं शिष्यः संवृत्तः ॥

दिनाष्टतयादारभ्य न कश्चिन्न्यायवादी न कपटश्राद्धप्रतिलम्भा न च गणिकालापः ॥

नेपथ्ये

विज्ञाप्यतां मिश्रस्य स्थाने न्यायकरणार्थं वादिनौ द्वारि वर्तेते ॥

॥ असज्जातिमिश्रः ॥

वत्स बन्धुवंचक प्रवेशय वादिनौ

विदूषको निष्क्रम्य विश्वनगरस्नातकानङ्गसेनाभिः सह पुनः प्रविशति ।

असज्जातिमिश्रः ॥ विश्वनगरस्नातकौ निरीक्ष्य स्वगतं

कथमनर्थान्तरमापतितं ॥

प्रकाशं

भगवन्नागन्तुका वयं । तन्नात्र भिक्षावसरः ।

॥ विदूषकः ॥

[1] भो मिस्स एदे ज्जेव वादिणो । एदाणं विवादं विचारेदु मिस्सो ॥

---

[1] भो मिश्र एतावेव वादिनौ । एतयोर्विवादं विचारयतु मिश्रः ॥

॥ असज्जातिमिश्रः ॥ सहर्षं सगौरवं च

आसनमुपनीयतां भगवते स्नातकाय च ॥

विदूषकस्तथा कृत्वा सर्वान् उपवेशयति

॥ असज्जातिमिश्रः ॥

कोऽर्थी कः प्रत्यर्थी ॥

स्नातकः

[1] भासाए अहं अत्थी णिअरकरणे भअवं ॥

असज्जातिमिश्रः

न्यायवादिनः प्रथमतो निकरः पश्चाद्भाषोत्तरे ॥

विश्वनगरः

अयमस्मत्संन्यासदण्डो निकरः ॥

स्नातकः

[2] एदं मे इन्दासणकोल्लिअं णिअरकरणेपविणीअदु ॥

---

[1] भाषायामहमर्थी निकरकरणे भगवान् ।

[2] इदं मे इन्द्राशनकौलिकं निकरकरणे प्रविनीयतां ।

॥ असज्जातिमिश्रः ॥ सगौरवं गृहीत्वा सप्रमोदमाघ्राय किंचिद्विनियुज्यते

निद्राकरं दोषबिनाशहेतु
क्षुधाकरं बुद्धिविकाशकं च ।
इन्द्राशनं कामबलानुकूलं
लब्धं मया दैववशादिदानीं ॥

विश्वनगरः

स्वाधीनयौवना सुभ्रूः सा मान्या सर्वकामिनां ।
अस्माभिरियमाक्रान्ता मदीया तेन वल्लभा ॥

॥ असज्जातिमिश्रः ॥ भाषां भूमौ लिखित्वा स्नातकं प्रति स्नातक सत्वरमुत्तरं कुरु ॥

स्नातकः

[1] एसा पुव्वं मए दिट्ठा दाऊण दसटङ्कआ ।
आणीदा अ मदिं दाइं मदीआ तेन वल्लहा ॥

[1] एषा पूर्वं मया दृष्टा दत्वा दशटङ्ककान् । आनीता च मतिं दयितां मदीया तेन वल्लभा ॥

असज्जातिमिश्रः

उत्तरमभिलिख ।।

विदूषकः

[1] भो मिस्स पेक्ख पेक्ख अणङ्गसेणाए लावण्णलच्छिं ।

मअलंछणविम्बफुरन्तमुही ।
णअणुप्पलचंचलकेलिकिही ।
थणभारणआ अइमज्झकिसा ।
पठमोदिअचन्दकलासरिसा ।।

असज्जातिमिश्रः ।। अनङ्गसेनामालोक्य

अहो निर्माणवैदग्धी विधातुः । तथा हि

नीलोल्लसल्ललितखञ्जनमञ्जुनेत्रा
सम्पूर्णशारदकलानिधिकान्तवक्त्रा ।
बाला जगत्त्रितयमोहनदिव्यमूर्तिर्
मन्ये विभाति जगति स्मरधीरकीर्तिः ।।

---

[1] भो मिश्र प्रेक्षस्व प्रेक्षस्वानङ्गसेनाया लावण्यलक्ष्मीं । मृगलञ्छन बिम्बस्फुरन्मुखी । नयनोत्पलवञ्चलकेलिनिधिः । स्तनभारनतातिमध्यकृशा । प्रथमोदितचन्द्रकलासदृशा ।

भो वादिनौ एषा विवादाध्यासितानङ्गसेना जयपराजयं यावत् मध्यस्थस्थाने स्थाप्यतां । एवंविधे च माध्यस्थ्ये वयमेव नृपतिन्यवस्थिता मध्यस्थाः ।

अनङ्गसेनामानीय स्वसंनिधावुपवेश्य तदीयकरं हृदये
निधाय सप्रमोदं

विकचकमलकोषश्रीरियं काम्यभूतिर्-
हिमकरकरजातचन्द्रकान्ताद्धि शीतः ।
मृगमदघनसारासंगसौरभ्यभव्यो
हरति मदनतापं कोमलः पाणिरस्याः ॥

क्षणं विचार्य उच्चैर्विहस्य

भो वादिनौ एतद्राज्यक्षेत्रेभुजङ्गयोरिव युवयोर्विवादः ॥ तथा हि

नैषा त्वदीया भवतोपि नेयं
मत्संनिधिष्ठा सुभगा मदीया ।

स्वप्नेपि पूर्वं मयि ज्ञातकेलि
स्ततोपि हेतोः खलु वल्लभा मे ॥

॥ विदूषकः ॥ अनङ्गसेनामालोक्य जनान्तिकं

[१] भो सुन्दरि एसो मिस्सो वुद्धो भअवं णिद्धणो सिणादओ इछारअणो । ता एदाणं समागमं परिहरिअ अम्हसमागमेण तुह जोव्वणं सफलं भोदु ॥

इत्यात्मानं दर्शयति

॥ अनङ्गसेना ॥ सस्मितं

[२] एदं धुत्तसमागमपहसणं संवुत्तं ॥

॥ विश्वनगरः ॥ सवैराग्यं

वत्स दुराचार न हि जलौकसामङ्गे जलौका लगति । मूलनाशकस्यायं विचारः । तदेहि सुरतप्रियाया एव भवनं गच्छाव ॥

---

[१] भो सुन्दरि एष मिश्रो वृद्धो भगवान् निर्धनः स्नातक इच्छारचनः । तस्मादेतेषां समागमं परिहृत्य अस्मत्समागमेन तव यौवनं सफलं भवतु ।

[२] एतत् धूर्तसमागमप्रहसनं संवृत्तं ॥

इति निष्क्रान्तौ । ततः प्रविशति अपटीक्षेपेण मूलनाशकः

॥ मूलनाशकः ॥

[1] अले अले अणङ्गशेणिए जाणिदे तुम्ह चलिदं ज वालं वालं कअमअणमन्दिलक्खौलबेदणं पत्थन्ते बहुवालं हग्गे तए पआशिदे । ता शंपदं पअच्छ । अण्णधा लाअदोहाइं दाव दाइश्शं ॥

अनङ्गसेना

[2] मूलनासअ संपदं ज्जेव असज्जाइमिस्सादो तुह दाइस्सं । ता सुत्थो होहि ॥

विदूषकः

[3] को एसो दुट्ठदसणो दुट्ठचरिदो दुट्ठवअणो ॥

---

[1] अरे अरे अनंगसेनिके ज्ञातं तव चरितं यद् वारं वारं कृतमदनमन्दिरक्षौरवेतनं प्रार्थयन् बहुवारमहं त्वया प्रकाशितः ॥ तस्मात् सांप्रतं प्रयच्छ । अन्यथा राजद्विधानि तव दास्यामि ॥

[2] मूलनाशक सांप्रतमेव असज्जातिमिश्रान् तव दास्यामि । तस्मात् सुस्थो भव ॥

[3] क एष दुष्टदर्शनो दुष्टचरितो दुष्टबचनः ॥

असज्जातिमिश्रः

एष किं भगवद्गोचरः । पश्य

छिन्नौष्ठनासो गलगण्डनम्रो
वामाक्षिकाणो गलितैकहस्तः ।
शिलीपदव्यापृतदक्षिणाङ्घ्रिः
स मूलनाशः किल नापितोसौ ॥

मूलनाशकः सहसोपसृत्य सर्वेषां सप्रमाणमादर्शं दर्शयति ,

असज्जातिमिश्रः

मूलनाशक क्रियतामस्माकं नखलोम्नां परिष्कारः ॥

मूलनाशकः

[1] पठमं वेदनं पच्छ ॥

असज्जातिमिश्रः

मूलनाशक किमर्थं ॥

मूलनाशकः

[2] भो जदि तुमं पलिक्खलन्ते पठमं ज्जेव मलिश्शशि ता वेदनं किण पइच्छिदव्वं ॥

---

[1] प्रथमं वेतनं प्रयच्छ ।

[2] भो यदि त्वं परिस्खलन् प्रथमं मरिष्यसि तदा वेतनं केन प्रयन्तव्यं ॥

असज्जातिमिश्रः

अलं परिहासेन । गृह्यतामिदं पारितोषिकं ॥

इति कौलिकादाकृष्य गुञ्जाकिनीं ददाति । मूलनाशकः सगौरवं गृहीत्वा सप्रमोदं आघ्राय किंचिद्विनियुज्य च मिश्रस्य करचरणयोर्बन्धनं कृत्वा व्यापारं नाटयति

॥ असज्जातिमिश्रः ॥ सवेदनं

दलति हृदयमेतन्मोहमभ्येति चेतः
स्फुटति सकलदेहे कीकसग्रन्थिसंधिः ।
विरम विरम शिल्पान्मूलनाश त्वमस्मात्
शिव शिव शिव सद्यो जीवनं कुप्यतीव ॥

इति मोहमुपगतः

॥ मूलनाशकः ॥ चालयित्वा

[१] कधं मलिदे अशज्जाइमिश्शे लहू लहू अबक्कमिश्शं ॥

इति निष्क्रान्तः

---

[१] कथं मृतोऽसज्जातिमिश्रः । लघु लघु अपक्रमिष्यामि ॥

॥ विदूषकः ॥ मिश्रस्य करचरणयोर्बन्धनमपनीय

[1] भोआणवेदु मिस्सोअवरं हु तुह पिअं णिव्वाहइस्सं ॥

॥ असज्जातिमिश्रः ॥ संज्ञां लब्ध्वा

राष्ट्रं समस्तं कपटेन भुक्तं
धूर्त्तक्रियाभिर्द्द्येतयमाप्ता
भवान् विनीतो मिलितश्च शिष्यः।
नातः परं नः प्रियमस्ति लोके ॥

तथापीदमस्तु।

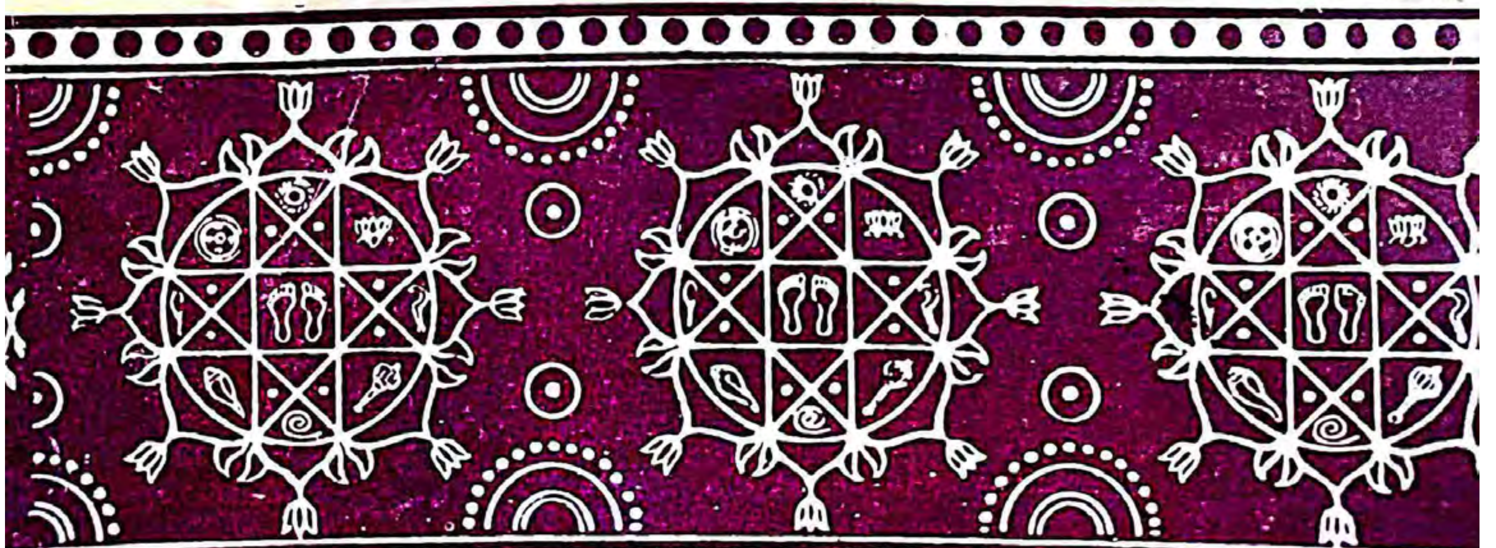
काले संततवर्षिणो जलमुचः शस्यैः समृद्धा धरा।
भूपाला निजधर्मपालनपरा विप्रास्त्रयीनिर्भराः।
स्वादुक्षीरनतोधसः प्रतिदिनं गावो निरस्तापदः।
सन्तः शान्तिपरा भवन्तु कृतिनः सौजन्यभाजो जनाः

इति निष्क्रान्ताः सर्वे

इति श्रीकविशेखराचार्यज्योतिरीश्वरविरचितं धूर्तसमागमं नाम प्रहसनं समाप्तं ॥

[1] भो आज्ञापयतु मिश्रः। अपरं खलु तव प्रियं निर्वाहयिष्यामि ॥





অখিল ভাৰতীয় মৈথিলী সাহিত্য সমিতি
'তীৰভুক্তি', প্রয়াগ-২